REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 1 | OCTOBER - 2025

रामायण काल में आश्रम व्यवस्था

राजेश कुमार[1] ,सुषमा नारा[2]
शोधार्थी, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा).
शोध–निर्देशिका, असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा).

शोधसार

प्राचीन काल से लेकर आज तक भारत में अध्यापन पुण्य का कार्य माना गया है। गृहस्थ ब्राह्मण के पांच महायज्ञों में ब्रह्मयज्ञ का स्थान सर्वोच्च था। ब्रह्मयज्ञ में विद्यार्थियों को शिक्षा देना प्रधान कर्म था।[1] ब्रह्मयज्ञ के लिए प्रत्येक विद्वान् गृहस्थ के लिए शिष्यों का होना आवश्यक था। इन्हीं शिष्यों में आचार्य के पुत्र भी होते थे। इस प्रकार प्रत्येक विद्वान गृहस्थ का घर विद्यालय था। ऐसे विद्यालयों का प्रचलन वैदिक काल में विशेष रूप से था।[2] महाभारत में भी गृहस्थाश्रम में रहने वाले आचार्यों के अपने घर में अध्यापन करने के उल्लेख मिलते हैं।[3] वैदिक काल में अध्यापन का कार्य धन के अर्जन के लिए नहीं होता था। इस युग में आचार्यों की समझ थी कि जैसे सूर्य का कर्म प्रकाशित करना, नदी का कर्म जल प्रदान करना, भूमि का कर्म खनिज प्रदान कर सभी को पोषित करना है, उसी प्रकार ऋषि स्वभावतः ज्ञान देते है। इस प्रकार आचार्य का व्यक्तित्व गौरवपूर्ण था। आचार्य शब्द की व्युत्पत्ति निरुक्त में आचार शब्द से बतलाते हुए कहा गया है कि आचार्य को गृहण कराने वाला व्यक्ति आचार्य है।[4] आचार्य तभी आचार गृहण कर सकता था, जब वह स्वयं आचारनिष्ठ हो। प्रायः विद्यार्थियों को सदाचारी बनाने के लिए आचार्य का उपदेश पर्याप्त होता था। ये ऋषि–ज्ञान परंपरा ऋषि–मुनि अपने ऋषिकुलों अथवा आश्रमों से प्रेषित करते थे।

आश्रम

वैदिक वाङ्मय में 'आश्रम' शब्द व्यक्ति के जीवन के एक सोपान का द्योतक है। वैदिक युग में जीवन के तीन सोपानों का उल्लेख मिलता है– ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ। कालान्तर में चतुर्थ आश्रम का विकास हुआ भिक्षु–परिव्राजक या संन्यास। रामायण में 'आश्रम' शब्द ऋषियों की तपोभूमि तथा जीवन के स्तर दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ। विद्याभ्यासी, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी तथा ऋषि, मुनि आश्रमों में रहकर ही तपश्चर्या, यज्ञानुष्ठान, व्रतादि साधना करते थे।

[1]मनुस्मृति – 3.70
[2]छान्दोग्योपनिषद् – 8.15.1, 4.9.1, बृहदारण्यकोपनिषद् – 3.7.1
[3]महाभारत आदिपर्व 3.83, 3.21
[4]निरुक्त 1.4 – ''आचार्यः अस्मादाचरंग्राह्यत्याचिनोत्यर्थानाचिनोतिबुद्धिमितिवा।''

आश्रम संस्कृति रामायण युग की अपनी एक विशेषता है। रामायण में नागर संस्कृति की अपेक्षा आश्रम–संस्कृति का अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। एक तिहाई जन समुदाय आश्रमों में ही जीवनयापन करता था। ब्रह्मचारी, ऋषि, तपस्वी और वानप्रस्थी आश्रमों में ही रहकर विद्याध्यनन एवं आध्यात्मिक चिन्तन करते थे। तप, व्रत और यज्ञ इस युग के धार्मिक जीवन के प्रमुख अङ्ग थे। ये आश्रम नगर से दूर अरण्यों के अंचल में बनाए जाते थे, जहाँ का शान्त और एकान्त वातावरण, प्राकृतिक सुषमा उन शान्तिप्रिय और आत्मोन्नति के इच्छुक को अपनी और आकर्षित करती थी, जो नगर के संकुल बस्तियों के जन–कोलाहल से सर्वथा दूर रहना चाहते थे। आश्रमों का निर्माण सुविधाजनक और सुरम्य वन प्रदेशों में किया जाता था, जहाँ जीने के लिए सरलतापूर्वक फल–फूल–मूल और यज्ञार्थ समिध, पुष्प, कुशादि मिल सके।

विविक्त

आश्रमों के निर्माण में 'विविक्त' (एकान्त प्रदेश) का विशेष ध्यान रखा जाता था। अर्थात् ये ऐसे स्थलों पर बनाये जाते थे, जहाँ पर्याप्त रूप से जनसाधारण का आवागमन न हो सके और कभी–कभी उनसे सम्पर्क भी स्थापित हो सके। आश्रम–निर्माण वृक्षों की शाखा, बांस, बेंत, लकड़ी, रस्सी, घास–फूस आदि से किया जाता था। वर्षा ऋतु में पानी आदि से आश्रम की रक्षा के लिए वृक्षों के पत्तों, सरकंडे आदि का भी उपयोग किया जाता रहा होगा। दीवार प्रायः मिट्टी की होती थी। आश्रम प्रायः दो हिस्सों में होते थे।

- **पर्णकुटी**– आश्रम का बाह्य भाग पर्णकुटी कहलाता था।
- **उटज**– आश्रम का आभ्यन्तर भाग 'उटज' कहलाता था, जो ऋषि–मुनि के व्यक्तिगत निवास हेतु होता था।
- **आश्रम–मण्डल या तपोवन**– तपस्वियों की बस्ती को आश्रममण्डल या तपोवन[5] कहते थे।
- **तापसालय**– बस्ती के अन्तर्गत तपस्वियों के पृथक्–पृथक् निवास 'तापसालय' कहलाते थे।
- **अग्निशाला**– आश्रम में ही 'अग्निशाला' बनाई जाती थी, जिसे 'अग्निशरण' भी कहते थे। यह सर्वाधिक पवित्र स्थल माना जाता था। जहाँ ऋषिगण अपने 'अग्निहोत्र' सम्पादित करते थे।
- **अतिथिशाला**– आश्रम में अभ्यागतों के निवास हेतु 'अतिथिशाला' बनाई जाती थी, जहाँ अतिथिगण आकर निवास करते थे।
- **अजिर**– आश्रम में कुटी अग्निशरण आदि भवनों के शेष मध्य भाग अजिर या प्रांगण कहलाते थे, जहाँ शिष्यों द्वारा लाई गई कुश–समिधा तथा लकड़ी इत्यादि रखे जाते थे।
- **कुलपति**– सम्पूर्ण आश्रम मण्डल का एक मुख्य अधिपति होता था, जिसे 'कुलपति' कहते थे। यह अधिपति वयोवृद्ध, तपस्वी, नियतात्मा और दया–दाक्षिण्यादि सद्गुणों से युक्त होता था। इसके अधीन अनेक शिष्यगण, मुनि एवं तपस्वी दूर–दूर से आकर निवास करते थे तथा समस्थ प्रकार के ज्ञान और आध्यात्मिकता की शिक्षा प्राप्त करते थे। भरद्वाज, अगस्त्य, वाल्मीकि, रामायण युग के प्रख्यात कुलपति थे।

रामायणयुगीन आश्रम

रामायण युग में अनेक आश्रमों के अस्तित्व विद्यमान थे। उत्तर में सरयू के तट से लेकर दक्षिण में गोदावरी तट तक आश्रमों की एक दीर्घ शृंखला स्थित थी। दण्डकारण्य में नर्मदा और गंगा के किनारे तथा चित्रकूट पर अनेकानेक आश्रम बने थे। अगस्त्य, वसिष्ठ, अत्रि, शरभंग, वाल्मीकि, भरद्वाज, गौतम, सुतीक्ष्ण, शबरी आश्रम, विष्णु का सिद्धाश्रम, शिव का कामाश्रय आदि उस युग के सुप्रसिद्ध और विश्व–विख्यात आश्रम थे।

एक सन्दर्भ में राम ज्यों हि अतिशय विकट, विशाल दण्डकारण्य में पहुंचते हैं, उन्हें वहाँ ऋषियों के अनेक आश्रम दिखाई पड़ते हैं। उन आश्रमों में कुश और चीर फैले हुए थे, उनमें बड़ी–बड़ी यज्ञशालाएँ बनी हुई थीं, जो यज्ञपात्र, मृगचर्म तथा कुश, समिध, जल–कलश और फल–पुष्प आदि से शोभित थे। सर्वत्र ब्रह्म विद्या का तेज व्याप्त था। आश्रमों के आंगन लीप–पोत कर स्वच्छ किए गए थे। चारों ओर विविध प्रकार के पशु–पक्षी सानन्द वहाँ निवास करते थे। आश्रम के आस–पास अनेक प्रकार के स्वादिष्ट फलवाले बड़े–बड़े वृक्ष लगे हुए

[5]वाल्मीकिरामायण 3.1.2

थे। इन आश्रमों में फलमूलाशन, चीर–वल्कलधारी, कृष्णाजिन युक्त, सूर्य–चन्द्र सदृश तेजस्वी, जितेन्द्रिय और शान्तप्रकृति वाले अनेक मुनिगण निवास करते थे।

महर्षि अगस्त्य आश्रम के मार्ग में दूर ही से फल से लदे सहस्रों वृक्षों से सुशोभित था। चारों दिशायें पक्व पिप्पली वृक्ष की गंध से सुवासित था। दूर से ही कृष्णमेघ सदृश वेदि से धुआँ उठ रहा था। वहाँ के ऋषियों ने अपने प्रबल उद्योग द्वारा लोककल्याणार्थ उस प्रदेश को मनुष्यों के रहने के उपयुक्त बना लिया था।[6] महर्षि भरद्वाज का प्रयाग स्थित आश्रम अत्यन्त प्रख्यात और सर्वाधिक विशाल था। आश्रम की विशालता के कारण ही भरत और उनकी विशाल सेना सुचारु रूप से वहाँ ठहर सकी थी। उनके आश्रम में श्वेत चौबारे, हाथी–घोड़े के रहने की शालाएँ तथा हर्म्य और तोरणयुक्त प्रासाद बने हुए थे। आश्रम में अतिथियों के लिए एक राजवेश्म भी बना हुआ था। आश्रम में सभी प्रकार के वैभवपूर्ण सुख, साधन, अन्न– भोजन आदि का उत्तम प्रबन्ध था।[7]

इसी प्रकार महर्षि वाल्मीकि, शरभंग, अत्रि, शबरी आदि का आश्रम उस समय के विख्यात आश्रम थे। ये सभी आश्रम चूंकि घने और दुर्गम जंगलों के मध्य स्थित थे, अतः रास्ते के पहचान हेतु तापसगण ऊँचे–ऊँचे वृक्षों पर कुश–चीर बांध दिया करते थे। वाल्मीकि ने इन आश्रमों को आध्यात्मिक तेज से समन्वित बताया है। यहाँ अशिष्ट व्यवहार सर्वथा परित्याज्य था। राजागण भी इन पवित्र आश्रमों में प्रवेश करने से पूर्व अपने राजकीय अस्त्र–शस्त्र का परित्याग कर देते थे। राम अत्रि–आश्रम में प्रवेश करने से पूर्व अपने धनुष की प्रत्यंचा उतार लेते हैं।[8] भरत भी अपनी सेना को महर्षि भरद्वाज के आश्रम से एक कोस दूर ही ठहरा देते है और स्वयं भी अस्त्र–शस्त्र और राजोचित वस्त्र वही उतार देते है।[9]

आश्रमों के पवित्र एवं शान्त वातावरण को देखकर मनुष्य स्वयं अपने समस्त दुर्गुणों का त्याग करने के लिए स्वतः प्रेरित हो उठता था। आश्रम में वनवासी तपस्वियों का जीवन अधिकांशतः आध्यात्मिक साधना और धार्मिक कर्मकाण्ड के सम्पादन में व्यतीत होता था। वे तीक्ष्ण एवं कठिन व्रतों का पालन करते थे। प्रतिदिन प्रातः, सन्ध्या स्नान कर मन्त्र जप आदि में लीन हो जाते थे। ऋषिगणों का प्रतिदिन नदियों में स्नान करना, जलपूर्ण कलशों से सूर्य को अर्घ्य देना और जल कुम्भ लेकर भीगे वल्कल धारण कर आश्रम में लौटना उनके नित्य कर्म थे।[10]

रामायण में वर्णित कुछ प्रसिद्ध आश्रमों का वर्णन

वाल्मीकि आश्रम

वाल्मीकि आश्रम का उल्लेख रामायण में स्पष्ट रूप से दो स्थलों पर प्राप्त होता है। प्रचलित रामायण के संस्करणों में, एक बार वाल्मीकि चित्रकूट आश्रम का वर्णन राम के वन–गमन के प्रसंग में प्राप्त होता है।[11] रामायण के कुछ संस्करणों में राम द्वारा वाल्मीकि आश्रम में जाने का उल्लेख तो मिलता है, किन्तु रामायण के प्रामाणिक संस्करण में नहीं है। अतः यह अंश आधुनिक विद्वान् प्रक्षिप्त मानते है। इस प्रकार चित्रकूट पर वाल्मीकि का स्थायी आश्रम नहीं माना जा सकता।

वाल्मीकि आश्रम का दूसरा उल्लेख उत्तरकाण्ड में प्राप्त होता है। जिसमें वाल्मीकि आश्रम तमसा नदी के तट पर बताया गया है[12] अर्थात् यह आश्रम अयोध्या के विपरीत गंगा के दूसरी ओर दक्षिण में तमसा नदी के तट पर था।

[6]वा. रा. 3.11.37–52
[7]वा. रा. – 2.113.5
[8]वा. रा. 3.1.9
[9]वही, 2.90.1–2
[10]वही, 2.111.5
[11]वा. रा. 2.56.16–17
[12]वही, 7.47.14–16

वसिष्ठाश्रम

वसिष्ठ ऋषि की तपोभूमि वसिष्ठाश्रम कहलाती थी। इनके आश्रम में दिव्य गुण सम्पन्न शबला नामक 'गौ' रहती थी, जिसके दैविक गुणों को देखकर विश्वामित्र वसिष्ठ से उसे मांगते है, वसिष्ठ के इन्कार करने पर विश्वामित्र अत्यन्त कुपित हो युद्ध के लिए तत्पर हो जाते है। युद्ध में विश्वामित्र पराजित हो वन में तप करने चले जाते है।[13]

विश्वामित्र आश्रम

यह आश्रम भी इस युग में अत्यधिक प्रसिद्ध था। यही विश्वामित्र ने घोर तप किया था[14] और जगत् प्रसिद्धि प्राप्त की थी। आधुनिक सन्दर्भ में बक्सर का चैत्रवन में विश्वामित्र आश्रम स्थित था।

कामाश्रम

कामाश्रम का अर्थ है, कामदेव का आश्रम। इसी आश्रम पर काम का शरीर शंकर के हुकार से नष्ट हुआ था, अतएव वह आश्रम कामाश्रय कहलाया।[15] आधुनिक सन्दर्भ में बलिया जिले में सरयू–गंगा के संगम पर कामाश्रय स्थित था।

गौतमाश्रम

ऋषि गौतम द्वारा सेवित होने के कारण यह आश्रम गौतमाश्रम कहलाता था, जो रामायण के अनुसार मिथिला के समीप विद्यमान था। इस आश्रम पर सहस्रों वर्षों तक गौतम ऋषि अपनी पत्नी के साथ तपस्या की थी। गौतम इन्द्र को मुनिवेश में अहिल्या के साथ रति क्रिया करता देखकर इन्द्र और अहिल्या को शाप दे देते है और उस स्थान को छोड़ हिम शिखर पर तप करने चले जाते है।[16] आधुनिक तिरहुत में जनकपुर से चौबीस मील दक्षिण–पश्चिम की ओर, जरेल परगने के अहियारी गांव का अहल्या– स्थान रामायण युग में गौतमाश्रम कहलाता था।

सिद्धाश्रम

यह भी एक प्रसिद्ध आश्रम था। पूर्वकाल में इसी स्थान पर विष्णु ने सहस्रों वर्षों तक उग्र तप कर सिद्ध हुए थे, अतएव यह स्थान सिद्धाश्रम कहलाया। रामायण के अनुसार इसी स्थान पर विष्णु ने देवकल्याणार्थ वामन रूप धारण करके बलि को बांध लिया था।[17] आधुनिक शाहाबाद जिले में बक्सर के पश्चिमी भाग में सिद्धाश्रम विद्यमान था।

भरद्वाजाश्रम

प्रयाग में गंगा–जमुना के पवित्र संगम पर उग्र–तपी असाधारण तपस्वी, महाव्रती ऋषि भरद्वाज का आश्रम विद्यमान था।[18]

सुतीक्ष्णाश्रम

पश्चिम दिशा में सुमेरु पर्वत के रम्भ वन में ऋषि सुतीक्ष्ण का रम्य आश्रम विद्यमान था, जहाँ राम अपनी वन यात्रा के मध्य गमन करते हैं। ऋषि सुतीक्ष्ण के शब्दों में यह आश्रम सर्वगुण सम्पन्न था तथा

[13]वही, 1.51.23–28
[14]वा. रा. 1.29.4–5
[15]वही 1.23.10–15
[16]वा. रा. 1.48.15, 33
[17]वा. रा. 1.29.4, 5
[18]वही, 2.54.5–8

फल–मूल–जल आदि से परिपूर्ण था, अतएव ऐसे रमणीय आश्रम पर सुतीक्ष्ण राम को वनवास की अवधि व्यतीत करने की सद्सलाह देते है।[19]

शरभंगाश्रम

दक्षिण दिशा में प्रसिद्ध शरभंग ऋषि का आश्रम था।[20] जहाँ राम वनयात्रा के मध्य गमन करते है। सीता–लक्ष्मण सहित राम को अपने आश्रम पर आने पर ऋषि उनका श्रेष्ठ स्वागत करते है, तत्पश्चात् देह त्यागकर ब्रह्मलोक गमन करते है।

अगस्त्याश्रम

दक्षिण दिशा में ही अगस्त्य ऋषि का प्रसिद्ध आश्रम था जो अपनी नित्य अद्भुत शोभा से सम्पन्न एवं अतिविख्यात था। वहाँ अनेकों सिद्ध महात्मा, सूर्य सदृश तेजस्वी विमानों पर नित्य आते–जाते थे और कितने ही महामुनियों ने शरीर त्याग कर स्वर्ग लोक प्राप्त किया था। महामुनि अगस्त्य ने अपने तपोबल से उस भंयकर दक्षिण दिशा को जन–निवास योग्य बनाया था। ऐसे पवित्र आश्रम पर राम वन यात्रा के मध्य गमन करते है।[21]

मतंगाश्रम

दक्षिण दिशा में पम्पासर के तट पर मंतगाश्रम स्थित था[22], जो ऋषिवर मतंग द्वारा निर्मित था। अपनी मृत्यु के समय मतंग ऋषि आश्रम का सारा भार शबरी पर छोड़कर स्वर्ग प्रयाण करते है। अन्त में शबरी भी राम के दर्शन करके स्वर्ग प्रयाण करती है। आधुनिक बिलारी जिले के पम्पासर के समीप मतंगाश्रम विद्यमान था।

शिक्षा

प्राचीन भारत वर्ष शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था। अनेक विद्वान बाहर से इस देश में आकर उच्च ज्ञान द्वारा स्वयं को लाभान्वित करते रहे हैं। वैदिक युग में इस देश में शिक्षा का व्यापक प्रचार हो गया था। उपनयन संस्कार हो जाने के पश्चात् बालक गुरु के आश्रम में जाकर निवास करता था और वहीं शिष्यवृत्ति करता हुआ गुरु से शिक्षा गृहण करता था। इस युग में शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य सच्चे अर्थों में व्यक्ति को सामाजिक दृष्टि से सभ्य, सुसंस्कृत, सुशिक्षित बनाना था। शिष्य प्रतिदिन ब्रह्म मुहूर्त में उठकर स्नान करने के पश्चात् प्रातः कालीन संध्या हवन करता था। तत्पश्चात् गुरु को प्रणाम करता था एवं अन्य कार्य पूर्ण करता था। पुनः संध्या काल में वह संध्या आदि कर्म करता था। ये सभी कर्म शिष्य के नित्य कर्म थे। जिन्हें करना अनिवार्य होता था क्योंकि आश्रम का ऐसा ही नियम था। अतः इस समय ऋषि–मुनियों के आश्रम ही शिक्षा के प्रमुख केन्द्र थे। इन आश्रमों में निवास करने वाले ऋषिगण ही ज्ञान के अक्षय भण्डार एवं श्रेष्ठ आचार्य, गुरु और उपाध्याय होते थे। आश्रमों में ये मुनिगण अपनी पत्नी और संतान सहित निवास करते थे। विद्यार्थी विभिन्न स्थानों से आकर इन मुनियों के सान्निध्य में शिक्षा गृहण करते थे।

[19]वही, 3.6.35, 36
[20]वा. रा. 3.4.20, 21
[21]वा. रा. 3.11.37–41
[22]वही, 4.1.130